Date / /
Page no.

भवानीप्रसाद मिश्र की काव्य चेतना

भवानीप्रसाद मिश्र ने 1930 में रचना करना आरम्भ कर दिया था। ये छायावाद का दौर था। प्रगतिशील लेखक संघ की 1936 में स्थापना हो गई थी लेकिन प्रगतिशील का विकास धीरे-धीरे होता है। मिश्र जी छायावादी दौर के कवि होने के बावजूद उन पर छायावाद का कोई प्रभाव देखने को नहीं मिलता, बल्कि उन्होंने कवि के रूप में अपनी अलग राह बनाई।

मिश्र जी अज्ञेय द्वारा सम्पादित 'दूसरा सप्तक' के प्रमुख कवि हैं। सबसे पहले 1943 में दूसरा सप्तक में उनकी ~~xx~~ ।। कविताएँ प्रकाशित हुई। इन ।। कविताओं में से 'फूल लाया हूँ कमल के', 'सतपुड़ा के जंगल', 'सन्नाटा', 'बूंद टपकी एक नभ से', 'मंगलवर्षा', 'टूटने का सुख' और 'गीतफरोश' जैसी कविताओं ने अपनी ताजगी, सहजता और सरलता से पाठकों का ध्यान तुरन्त अपनी ओर आकर्षित किया। इसके बाद 1956 में उनका पहला स्वतन्त्र कविता संग्रह 'गीतफरोश' प्रकाशित हुआ। यह न केवल मिश्र जी का अपितु आधुनिक हिन्दी कविता का एक महत्वपूर्ण संग्रह सिद्ध हुआ।

मिश्र जी ने स्वयं अपने काव्य के बारे में कहा है — "दर्शन में अद्वैत, वाद में गाँधी और टेकनीक में सहज लक्ष्य ही मेरे बन जाए ऐसी कोशिश है।" यह उनकी काव्य यात्रा और काव्य चेतना का आधार है। वे सीधे-सीधे कहते हैं कि अद्वैत और

Scanned by CamScanner

द्वैत में कोई विरोधाभास नहीं है। वे बड़े पैमाने पर यथार्थ को व्यक्त कर रहे हैं –

"गांव जिसमें झोपड़ी है घर नहीं है
झोपड़ी की खटिकियाँ हैं दर नहीं है
धूल उठती है, धुएं से दम घुटा है
मानवों के हाथ से मानव लुटा है॥"

यहाँ कवि ने कहते हैं कि मानव और प्रकृति दो नहीं हैं – दोनों में अद्वैत है। यही उनके चिंतन का काव्यात्मक अद्वैतवाद है।

मिश्र जी का जीवन दर्शन गांधी विचार दर्शन पर केंद्रित है।

मिश्र जी गांधी जी के दर्शन और जीवन से अत्यधिक प्रभावित थे, गांधी जी उनके सामने एक प्रेरणादायी के रूप में विद्यमान हैं और उन्हीं के कहने पर वह स्वतन्त्रता संग्राम में भी शामिल हुए थे इसलिए चाहे उनकी गीत फरोश हो, सत्यकाम हो ज्यादातर ज्यादातर कविताएं गांधीवादी चेतना और जीवनमूल्यों को अभिव्यक्त करती हुई कविताएं हैं। 'गांधी पंचशती' में उनका गांधीवाद स्पष्ट दिखाई देता है –

अगर गा न पाये तो हल्ला करेंगे
इस हल्ले में मौत आ गई तो मरेंगे।
"......हम मारेंगे नहीं, मरेंगे।
और इंच-इंच जगह पर जब कब्जा करना पड़ेगा उन्हें।"

मिश्र जी लोकमंगल की जो बात करते हैं वह भी उनके गांधीवाद से जुड़ी हुई है। वे अपने समय के यथार्थ को दिखाते हुए सत्य और मूल्य को स्थापित करते हुए लोकमंगल की बात करते हैं। उन्होंने सामान्य जन के लिए जो मूल्य प्रतिपादित किया है उसी को सत्यकाम में परिभाषित किया है। यहाँ सत्यकाम अपने जीवन के सत्य को बेझिझक गुरु

वो बताता है -

"मेरे पिता का नाम मुझको अज्ञात है,
माता से पूछा था आने के पहिले मैंने
उसने जो बताया
प्रभु है, मुझको वही है याद -"

मिश्र जी के काव्य में अपने समाज से आसपास के परिवेश से मोहभंग भी दिखाई देता है -

"जी लोगो ने तो बेच दिए ईमान
जी, आप न हो सुनकर ज्यादा हैरान -
मैं सोच समझकर आखिर
अपने गीत बेचता हूं
जी हां हुजूर मैं गीत बेचता हूं ॥"

मिश्र जी की कविताओं में प्रेम और प्रकृति का भी चित्रण मिलता है। प्रकृति और प्रेम उनकी कविताओं में छायावाद की तरह नही है। उनकी कविताओं में प्रकृति और प्रेम का संबंध कैसे बदल रहा है, वो भी उसमें नजर आती है -

"सॉस-सुन्दरी का सिंदूर अब बादल नहीं रक्त बनता है
आज महामानव के शोणित से सागर-शरीर सनता है॥"

मिश्र जी की कविताओं में प्रकृति एक सहज और अपने नैसर्गिक रूप में उभरी है। 'मंगलवर्षा' में वर्षा के आगमन का उल्लास और वर्षा से होने वाला लोमहित एकसाथ चित्रित हुआ है -

Scanned by CamScanner

Date / /
Page no.

" पाके फूटे आज प्योरे से पानी बरसा री
हरियाली छा गई हमारे सावन सरसा री ॥"

मिश्र जी के काव्य में जन जीवन के संघर्षों की वाणी भी मिलती है। मिश्र जी गांव की संवेदना के कवि है। जन जीवन की विषमताओं, विडम्बनाओं और विसंगतियों को वे वाणी देते है। उनके गांधीवादी स्वर में साम्यवादी आक्रोश शुरू से ही रहा है। यदि श्रमिक के श्रम को हड़पने का यह लूटतन्त्र चलता रहा तो जनक्रान्ति हो जाएगी। 'दूसरा सप्तक' में 'प्रलय' कविता इसी मनोभूमिका को व्यक्त करती है -

"एक दिन होगी प्रलय भी
मत रहेगी झोपड़ी
मिट जाएंगे, नीलम निलय भी।"

मिश्र जी की कविता में जो चीज सबसे अधिक आकर्षित करती है, वह उनकी टैकनीक - उनकी कविता का शिल्प है। अपने शिल्प को लेकर वह अत्यन्त सजग कवि है और सजगता इस हद तक है कि वह अपने चमत्कारिक रूप में अपने कथ्य को छिपाना नहीं चाहते है -

"जिस तरह हम बोलते है, उस तरह तू लिख,
और इसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख ॥"

वे आमबोल-चाल की भाषा स्वीकार करते है -

"लिखना आखिरकार मेरा बोलना है।"

उनकी काव्य भाषा में बोली की लय का संगीतात्मक राग बजता है।

पाके फूटे आज प्योरे से पानी बरसा री, हरियाली छा गई हमारे सावन सरसा री।

Page no.

मिश्र जी अपने समकालीन कवियों का अनुसरण नहीं करते, वे लीक पर कभी नहीं चलते। उनके कहने की अदा एकदम मौलिक, अद्वितीय और सहज स्फूर्त है —

"नए ठाठ से नई राह पर कदम धर दिया है
खाहमखाह टहलना हमने बंद कर दिया है।"

मिश्र जी ने सपाट बयानी को अपनी कविता लिखने का आधार बनाया। 'सतपुड़ा के जंगल' उनकी सहजशीलता और स्पष्टता का बेहतरीन उदा० है —

"उतरकर बहते अनेकों, कल कथा कहते अनेकों
नहीं निर्झर और नाले, इन वनों ने गोद पाले।।"

मिश्र जी ने लगातार युगसंघर्ष की बात की है पर सांचों को तोड़कर ही उनकी प्रतीक योजना को बदला है। प्रायः मिश्र जी ने प्रकृति के प्रतीकों से अपना अभिप्रेत अर्थ स्पष्ट किया है। उनकी कविताओं में उनके प्राकृतिक, ऐतिहासिक, पौराणिक और राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रतीकों ने उनकी काव्य भाषा में अर्थध्वनि की गहनता, गरिमा और उदात्तता पैदा की —

"हो गया झंडा हमारा तय
हमें कोई अब नहीं है भय।।"

मिश्र जी छायावादियों की भाँति चित्र मोह में नहीं पड़ते। अनायास ही वे सन्नाटा का बिम्ब ला सकते हैं और नींद में ऊँघते सतपुड़ा के जंगल,

Scanned by CamScanner

नर्मदा के गीत बिम्ब भी। आजादी के बाद के मोहभंग को वे शब्द बिम्बों में आंक सकते हैं -
"जी लोगों ने तो बेच दिए ईमान।"

अनुभव और अनुभूति के सरल तरल बिम्ब उनकी कविता की शक्ति है। ग्रामीण संवेदना के ताजे बिम्ब अर्थदीप्ति की गति से भरे हैं। अमूर्त, अगोचर और अलौकिक अनुभूति की बात वे कम करते हैं, वे मूर्त जीवन-जगत के व्यापार को काव्यात्मक बिम्ब में उजागर करते हैं। पर उनकी कविता बिम्ब का पर्याय नही है, सपाट बयानी में भी वे अपनी बात खुलकर कह लेते हैं। बोलचाल की लय शक्ति के कारण उनकी कविताएं जनता में प्रसिद्ध रही हैं।

मिश्र जी ने प्रायः तुकान्त छन्द में रचनाएँ की हैं, पर मुक्त छन्द का अभ्यास भी उन्हे अच्छा है उनके छन्द भाव को आकार देते हैं, वाक्य को तरासते हैं और तुक - अर्थ को संवारते हैं।

"पिता जी जिनको बुढ़ापा
एक क्षण भी नही व्यापा।।"

माखनलाल चतुर्वेदी की भाँति वे लोक जीवन की लोकलय को लेकर अपना छन्द गढ़ते हैं।

मिश्र जी ने प्रबन्ध और मुक्तक दोनो काव्य रूपों के प्रचलित सांचे को तोड़कर अपना नया काव्य सांचा निर्मित किया है। इसमें लोक शैली के

शान्त चित्त सत्यकाम
चरणों में नत हुए
सविनय प्रणत हुए
बोले, "हे देव, मैं हूँ अकुल तव सत्यकाम
मेरे पिता का नाम मुझको अज्ञात है,
माता से पूछा था"

गायन और संवाद के रूप में मिलते हैं। सहज बयानी में वे उर्दू की कोई भी शैली उठा लेते हैं - उनकी रचना बातचीत की लय में बन जाती है -

"दर्द जब घिरे बहाना करो
नाना ना, ना, ना ना ना करो॥"
हँसो खेलो, मस्ती के संग
दर्द को लगे कि यह क्या ढंग?
दर्द भीतर हैरान रहे
ओठ पर अपने गान रहे।"

मिश्र जी लोकगीतों के रूप में सामूहिक प्रार्थनाएँ लिखते हैं। स्वाधीनता आन्दोलन की निर्भय भाव भरी प्रभात फेरियां गाते हैं -

"अगर गा न पाये तो हल्ला करेंगे
इस हल्ले में मौत आ गई तो मरेंगे।"

लोकगीत और प्रगीत दोनों ही मिश्र जी की कलम से नया संस्कार पाकर मंजते और चमक उठते हैं। मिश्र जी नयी कविता में कथात्मक प्रबंध को तोड़कर लम्बी कविता लिखने का चलन हुआ।

Scanned by CamScanner

मिश्र जी ने 'शब्दो के तलपर, सतपुड़ा के जंगल, नीली रेखा तक, जिंदगी की धारा में, जलवा चीजों का जैसी लम्बी कविताएँ लिखी है।

छोटे-छोटे भाव गीत लिखने में मिश्र जी का मन बहुत रमता है –

सहो
और बेहतर बातों के लिए
रहो।

अज्ञेय जी का यह कथन ~~भाव~~ भवानीप्रसाद मिश्र की कविता पर एकदम खरा सिद्ध होता है कि "काव्य सबसे पहले शब्द है और सबसे अन्त में भी यही बात बच जाती है कि काव्य शब्द है। सारे कवि धर्म इसी परिभाषा से निःसृत होते हैं। शब्द का ज्ञान – शब्द की अर्थवत्ता की सही पकड़ ही ~~आविष्कार~~ कृतिकार को ~~कवि~~ कृति बनाता है। ध्वनि, लय, छन्द आदि के सभी प्रश्न इसी में से निकलते हैं और इसी में विलय होते हैं। इतना ही नहीं सारे सामाजिक संदर्भ भी यहां से निकलते हैं।" ध्यान देने की बात है कि मिश्र जी ने शब्द – साधना को हर कीमत पर बनाए रखा है –

"शब्दों का सही उपयोग योग है
और कल्याणकारी है योग की तरह
शब्द का मनमाना उपयोग भोग है
और विनाशकारी है भोग की तरह।"

Scanned by CamScanner